Mahakavi Kalidas ke kavyo mein vasant ritu ka varnan

महाकवि कालिदास के काव्यों में वसन्त ऋतु का वर्णन

Dr.Ranjan kumar pandey

डॉ0 रंजन कुमार पाण्डेय

सहायक प्रो0 (संस्कृत) पं0 तारकेश्वर

व्रजनंदन शारदा (संस्कृत) महाविद्यालय

कोचस, रोहतास (बिहार)

वसन्त को भारत की प्रसिद्ध छह ऋतुओं का राजा कहा गया है। समस्त भारतीय वाङ्मय के कवियों ने ऋतुराज वसन्त की अपनी–अपनी अनुभूति के अनुसार, शब्दमय अभिव्यक्ति की है। वसंत की शाब्दिक अभिव्यंजना में या वर्णन की विलक्षणता में महाकवि कालिदास की द्वितीयता नहीं है। यह महाकवि वस्तुतः संस्कृत के सर्वप्रथम छायावादी कवि हैं। छायावाद का अस्तित्व एवं उसकी व्यापकता की आधारभूमि प्रकृति है और प्रकृति व्यंजना के माध्यम से आत्माभिव्यंजना छायावाद की प्रमुख प्रवृत्ति है। छाया प्रकृति की आत्मा है, जिसका प्रकृति में विनियोग कवि की संवेदनशीलता से ही सम्भव है।

महाकवि कालिदास के काव्यों में चाहे 'मेघदूत' हो, 'रघुवंश' हो, 'कुमारसम्भव' हो या ऋतुसंहार हो– सर्वत्र वसंत ऋतु का वर्णन तीव्रतर संवेदनात्मक स्तर पर हुआ है। इसलिए उनका प्रत्येक वसन्त–चित्र प्रकृति का सवाक् चित्र बन गया है। 'मेघदूत' यद्यपि ऋतुओं की रानी वर्षा के वर्णन से ही सन्दर्भित है, तथापि कालिदास ने यक्षपुरी अलका में निरन्तर छहों ऋतुओं की एकत्र अवस्थिति को संकेतित किया है। अलका

की यक्ष सुन्दरियाँ अपने केशपाश में कुरबक के फूल गूँथती थीं। कुरबक वसन्त ऋतु में खिलनेवाला फूल है (चूड़ापाशे नवकुरबक ''चारूकर्णेशिरीषम्'' ।[1]

महाकवि कालिदास ने ''रघुवंश'' महाकाव्य के अन्तिम उन्नीसवें सर्ग में रघुकुल के अन्तिम राजा अग्निवर्ण के उद्दाम रति–विलास के वर्णन–क्रम में लिखा है कि राजा अग्निवर्ण वसन्त के दिनों को, उसके लक्षणों के अनुरूप पूरी रसमयता के साथ बिताता था। दक्षिण पवन, यानी मलयानिल के झोंके से आम की मंजरियाँ विकसित होकर सुरभिमुखर हो जाती थी, तब अग्निवर्ण की प्रेयसियाँ अपने प्रणय–कलह को भूल जाती थीं और काम–प्रेरित होकर स्वयमेव दुःसह वियोग से पीड़ित अग्निवर्ण को आश्वस्त करने उसके पास चली जाती थीं और फिर अग्निवर्ण की गोद में बैठकर झूला झूलती हुई सुन्दरियाँ भय का बहाना बनाकर झूले की रस्सी छोड़ देतीं और उनकी मृदुल भुजाएँ अनायास अग्निवर्ण के गले को बाँध लेती थीं।[2]

कालिदास का 'मुमारसम्भव' महाकाव्य तो उद्दाम काम–सौन्दर्य के रति–रंजित वर्णन के कारण कई मिथकों का जन्मदाता बन गया है। कुछ लोग कहते हैं कि पार्वती के उद्दाम श्रृंगार के निरावृत वर्णन के कारण उन्होंने कालिदास को शाप दे दिया था, जिससे उनका यह काव्य अधूरा ही रह गया।कुछ लोगों का अनुमानाधृत मत है कि कदाचित् अष्टम सर्ग में शंकर–पार्वती की अति श्रृंगारिकता के वर्णन के कारण शिवभक्त लोगों की अप्रसन्न्ता के भय से महाकवि ने इस काव्य को अधूरा छोड़ दिया है। सम्प्रति इस महाकाव्य के कुल सत्रह सर्ग ही उपलब्ध हैं। किन्तु कालिदास–रचित आठ ही सर्ग है, शेष सर्ग किसी दूसरे कवि द्वारा रचित हैं। कुछ लोग तो यह भी कहते हैं कि पार्वती के प्रकोप से कालिदास को कुष्ठ–कष्ट भी भोगना पड़ा था। किन्तु मेरी अवधारणा है कि सुरत में आसक्त शिव–पार्वती के समक्ष देव प्रेरित अग्निदेव के आ जाने से उनका रति–भंग हो गया। इससे खिन्न पार्वती ने

[1] उत्तर में श्लोक संख्या–2

[2] रघुवंश श्लोक सं0 43–44

अग्निदेव को सर्वभक्षी और कुष्ठी हो जाने का शाप दिया था। लगता है, यहीं प्रसंग कालातर में कालिदास पर आरोपित हो गया। कहना न होगा कि 'कुमारसम्भवम्' में शिव–पार्वती के निर्बन्ध रत्यात्मक वर्णन ने ही महाकवि कालिदास को विवादास्पद कवि बना दिया क्योंकि भारतीय मान्यता के अनुसार माता–पिता की कामचेष्टा वर्णनीय नहीं होती।

देवताओं ने तारकासुर से ऋण के लिए ही शिव और पार्वती का विवाह आयोजित किया था। ब्रह्मा के वरदान से मदोन्मत्त तारकासुर ने जब देवताओं को बहुत सताया, तब ब्रह्मा के परामर्श से ही देवराज इन्द्र ने अपनी सभा में कामदेव को बुलाया और समाधिकालीन शंकर के हृदय में पार्वती के प्रति कामाकर्षण उत्पन्न करने का भार सौंपा। कामदेव शंकर जी के उग्रस्वभाव से डरता था, परन्तु इन्द्र की आज्ञा से वह अपनी पत्नी रति और सखा वसन्त के साथ हिमालय के उस स्थान पर पहुँचा जहाँ शिवजी एकान्त तपस्या कर रहे थे। उस समय उनका ध्यान परमात्मतत्त्व में लीन था। शिवजी की समाधि टूटने पर उनकी पत्नी पार्वती पुष्पांजलि अर्पित करने उनके समक्ष आई। वसन्त ने हिमालय की शिखरभूमि और उपत्यका (तलहटी) में सर्वत्र अपना मोहक साम्राज्य स्थापित कर दिया। वसन्त का एक अर्थ है–वश (बस) – अन्त, अर्थात् जहाँ लोगों का अपने पर कोई वश या अधिकार नहीं रह जाता, वश का अन्त हो जाता है। वशी या जितेन्द्रिय भी अवश या बेबस हो जाता है। वसन्त के इस मोहक वातावरण में ही कामदेव ने अपने विश्वविजय पुष्पधनुष पर 'सम्मोहन' बाण चढ़ाकर शिव को कामाहत किया था। आँख खुलते ही सामने खड़ी पार्वती को देख उनका हृदय क्षुब्ध हो उठा था।

महाकवि ने अप्रस्तुत योजना अथवा अमूर्त्त में मूर्त्तीकरण के माध्यम से वसन्त का मनोरम बिम्ब विधायक वर्णन करते हुए लिखा है कि शिव के तपोवन में मूर्त्तिमान वसंत के आगमन से अशोक का वृक्ष कन्धे से फुनगी तक लहक उठा, नये पत्तों और फूलों से वह आमूलचूल लद गया। कवि प्रसिद्धि है कि सुन्दरियों के नूपुर–मुखरित

चरणों के आघात से अशोक खिलता हैं लेकिन उस तपोवन में अशोक ने रमणी के पदाघात की भी प्रतीक्षा नहीं की। गन्धमुखर मलयानिल के संचार से समस्त प्रकृति बेसुध सी हो गयी। आम की मंजरियों और पल्लवों पर बैठे भौंरे काली स्याही से लिखे कामदेव के नाम की तरह लग रहे थे। द्वितीया के चाँद जैसे आकार के अधलिखले पलाश के फूल वसन्त–पुष्प से निर्दयतापूर्वक भोगी गई वनस्थलीरूपी स्त्री के शरीर पर ताजे नख के घाव के समान दिखाई पड़ते थे। भ्रमरों की पंक्तियाँ वसन्तश्री के आँखों के अंजन बन गई थीं। सूर्य के लालिमा के महावर से वसन्तश्री ने अपने आम्रपल्लव रूप अधरों को रंजित कर लिया था। तिलक के फूल वसन्तश्री के मुख पर तिलक (बिंदिया) की तरह जगमगा रहे थे। वायु के प्रवाह की ओर उन्मुख होकर दौड़ते हुए मदमस्त हरिणों के पैरों से दबकर वन की धरती पर गिरे सूखे पत्ते मर्मर आवाज कर रहे थे। आम के अँखुए खाने से कसैला कण्ठ वाले पुरुष कोकिली कुक रहे थे और उनकी वह कूक कामदेव की आमन्त्रक वाणी बनकर मानिनियों के कारण मान का भंग कर रही थी। वातावरण में गर्मी आ जाने के कारण किन्नर–रमणियों के मृदुल कपोलों पर चित्रित कलात्मक चित्रकारी पसीने की बूँदों के साथ पिघलकर उनके मुख–मण्डल पर फैल रही थी।[3]

कालिदास के इस वसन्त–वर्णन में मानवीकरण अलंकार का रमणीय प्रयोग विस्मयकारी है। सारा परिवेश ही रति–रत हो गया था। भ्रमर–भ्रमरियों का अनुसरण कर रहे थे। मृगी–मृग के स्पर्श–सुख से आँखें बन्द किए खड़ी थी और मृग अपने सींगो से उसके शरीर को धीरे–धीरे खुजला रहा था। स्नेहाकुल हथिनी प्रेमावेश में पद्म–पराग से सुवासित जल अपनी सूँड़ में भर–भरकर हाथी को पीला रही थी। चकवा कमलनालों को चख–चखकर उन्हें अपने प्यारी चकई को भेंट में प्रस्तुत करते

[3] कुमार सम्भव, सर्ग–3 श्लोक सं0 23–33

हुए प्रसन्न हो रहा था। यहाँ तक कि पुष्पगुच्छों के स्तनोंवाली लता–वधुएँ अपने लचीले प्रशाखा–रूप भुजबन्धनों को वृक्ष के गले में डाल रहीं थीं।[4]

इस प्रकार वसन्त के प्रभाव से समग्र चेतन–अचेतन प्रेम–विभोर हो गया था। उपर्युक्त प्रकृति–चित्रों में कवि की गहन आत्मतन्मयता का संयोग हुआ हैं अमूर्त प्राकृतिक उपादानों को सहज सुन्दर मूर्तरूप देकर महाकवि ने उसके सौन्दर्य को द्विगुणित कर दिया है। अर्थ बिम्ब में परिणत हो गया है। महाकवि की कमनीय काव्यभाषा में चित्रात्मक शैली का विनियोग हुआ है, इसलिए वसन्त का रूप–सौन्दर्य ततोऽधिक रमणीय बनकर उद्भावित हुआ है। कालिदास का 'ऋतुसंहार' तो ऋतु वर्णन का अनुपम काव्य है। संस्कृत वाङ्मय में भारत की छहों ऋतुओं पर एक स्वतन्त्र काव्य लिखने का श्रेय कालिदास को ही है। संसार में कोई भी देश ऐसा नहीं है जहाँ छह प्रकार की ऋतुएँ होती हों। किन्तु भारत तो छह प्रकार की ऋतुओं की विहार–भूमि है।

महाकवि ने अपनी भारत–भूमि की इसी विशेषता को रेखांकित करने के लिए 'ऋतुसंहार' काव्य की रचना की है। 'ऋतुसंहार' में छहों ऋतुओं के अनुसार छह सर्ग हैं। महाकवि ने ऋतुओं का क्रम इस प्रकार रखा है – ग्रीष्म, प्रावृड् (पावसः वर्षा), शरद् हेमन्त, शिशिर और वसन्त। विविध छन्दों में निबद्ध वसन्त–वर्णन सातिशय मनोहरता के साथ उपन्यस्त हुआ है। प्रारम्भ में सात छन्दों में वसन्त की अपार सुषमाश्री का दिव्य दर्शन कराया गया है। शेष छन्दों में (कुल छन्द सं. 38) वासन्ती परिवेश के प्राकृतिक उपादानों का नवयौवन पर पड़ने वाले उन्माद प्रभाव का वर्णन किया गया है। वसन्त के व्यक्तित्व का आरम्भ ही सुरतव्यवसायों के मन को बींधनेवाले योद्धा के रूप में किया गया है–

प्रफुल्लचूतांकुरतीक्ष्णसायको द्विरेफमाला–विलसद्धनुर्गुणः।

[4] कुमार सम्भव सर्ग–3 श्लोक 34–40

मनांसिमेत्तं सुरतप्रसंगिनां वसन्तयोद्धा समुपागतः प्रिये।।[5] (6.1)

अपनी प्रिय को सम्बोधित करते हुए महाकवि कहते हैं कि हे प्रिय! आम की खिली हुई मंजरियों की तीखे बाण के साथ तथा अपने पुष्पधनुष पर भ्रमर–पंक्तियों की प्रत्यंचा चढ़ाकर सुरतप्रेमी रसिकों के हृदय बेधने के लिए वसन्त योद्धा की तरह आ पहुँचा। महाकवि ने वसन्त को 'श्रृंगारदक्षागुर' शब्द से विशेषित किया है।

रक्ताभोकविकल्पिताधरमधूर्मन्त द्विरेफस्वनः

कुन्दापीडविशुद्धक्तनिकरः प्रोत्फुल्लपद्माननः।

चूतामोदसुगन्धि मन्दपवनः श्रृंगारदीक्षा गुरुः

कल्पान्त मदनप्रियो दिशतु वः पुष्पागमो मंगलम्।।[6] (6.36)

अथ्रात् मधुमय लाल अधरों जैसे रक्तशोक के पुष्पों का पराग पीने से मदमस्त भ्रमरों के गुंजर से शुभ्र दन्तपंक्ति जैसे उज्ज्वल कुन्द पुष्पों से निर्मित हारों से, विकसित कमलों जैसे मनोहारी मुखों से और आम की मंजरी की सुगन्ध से सिक्त मन्द–मन्द बहने वाली हवा से श्रृंगार की दीक्षा देने वाला गुरुस्वरूप यह काममित्र वसन्त आप सबका युग–युग तक मंगल करे।

महाकवि कालिदास ने अधिकांशतः वसन्त के मद्नोद्दीपक रूप को ही चित्रित किया है। कुल मिलाकर 'ऋतुसंहार' का वसन्त वर्णन वस्तुवादी नहीं है, अपितु प्रकृति के उपादानभूत धरती और आकाश की मनोहरता के मानवीकृत चित्रण द्वारा जीवन के प्रणय–मूलक दृश्यों के चमत्कारी समन्वय का उपस्थापक है। ''ऋतुसंहार'' की गेय शैली तथा वर्णन–प्रक्रिया का प्रभाव निश्चय ही काव्यरसिकों पर ही नहीं, अनुवर्ती काव्यकारों पर भी गहराई से पड़ा है। कालिदास की काव्यभाषा में वर्णन–प्रौढ़ता और भावप्रांजलता की चित्रोपमता का उत्तर योग हुआ है, जिसमें अभिव्यक्ति–कला का

[5] ऋतु संहार–सर्ग 6 श्लोक 1

[6] ऋतु संहार–सर्ग 6 श्लोक 36

विलक्षण विनियोग हुआ है। इसलिए महाकवि कालिदास के वसन्त–वर्णन में कोमल भावों के साथ ही हृदयग्राही विचारों का भी प्रायोदुर्लभ मणि–प्रवाल–संयोग सुलभ हुआ है, जिससे साधारण भी असाधारण बन गया है।

डॉ0 रंजन कुमार पाण्डेय
सी–20/14, नई पोखरी, सिगरा
वाराणसी–221010